तीर्थंकर महावीर

संकलन/सम्पादन

अनूप चन्द्र जैन
एम. ए. एल.-एल. बी.
डी. जी. सी.

प्रकाशन

मनोज पब्लिकेशन्स
आगरा - २८२००४

प्रकाशक

डालचन्द्र छक्कूलाल जैन
२६, चौकी गैट, फिरोजाबाद - २८३२०३
फोन : ८२०७२०

प्रथम संस्करण, १०००

अप्रैल १९९३

मूल्य : सदुपयोग

प्रकाशक :

राजेन्द्रकुमार जैन
मन्त्री,
वीर-निर्वाण भारती,
६६, तीरगरान स्ट्रीट
मेरठ शहर-२

तृतीय पुष्प

लेखक :

डा० जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल
एम. ए., पी-एच. डी.
बेलनगंज, आगरा-४

२५०० वाँ वीर-निर्वाणोत्सव के निमित्त
नवम्बर, १९७३

प्रथम संस्करण २५०० प्रतियाँ

मूल्य : एक रुपया पचास पैसे

मुद्रक :

श्री विष्णु प्रिंटिंग प्रेस,
राजा की मंडी, आगरा-२

प्रकाशकीय

प्रस्तुत ग्रन्थ वीर-निर्वाण भारती का तृतीय पुष्प है। इसकी रचना परम पूज्य मुनिश्री विद्यानन्द जी के सान्निध्य में डॉ० जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल ने की है। पूज्य मुनिश्री की वात्सल्यमयी प्रेरणा के द्वारा ही यह रचना प्रकाश में आ सकी है।

वीर-निर्वाण भारती की स्थापना २५०० महावीर परिनिर्वाणोत्सव के अवसर पर धर्म एवं संस्कृति से सम्बन्धित अनुसंधानपूर्ण रचनाओं के प्रकाशन आदि के लिए हुई है। प्रथम पुष्प के रूप में डॉ० खण्डेलवाल की 'जैन शासन का ध्वज' शीर्षक रचना प्रकाशित हुई। द्वितीय पुष्प का शीर्षक 'भारतीय संस्कृति और श्रमण परम्परा' है और इसके रचयिता डा० हरीन्द्रभूषण जैन हैं। और अब यह तीसरा पुष्प आपके समक्ष प्रस्तुत है। इसमें लेखक ने मुनिश्री के निर्देशन में तीर्थंकर महावीर के जीवन का असंदिग्ध वृतान्त प्रस्तुत किया है। मुनिश्री के प्रबुद्ध एवं व्यक्तिगत निर्देशन में रचित यह रचना अत्यन्त सरल, सुबोध एवं रोचक शैली में होने के कारण सहज ही लोकप्रियता प्राप्त कर सकेगी, ऐसा हमारा विश्वास है। इस पुस्तक के लघु कलेवर में संक्षेप में वर्द्धमान-महावीर के व्यक्तित्व का विकास एवं उनके प्रमुख उपदेशों की ओर संकेत किया गया है।

वीर-निर्वाण भारती परिनिर्वाण महोत्सव के उपलक्ष में मुनिश्री के निर्देशन में अंग्रेजी में भी जैन धर्म और सिद्धान्त के सम्बन्ध में दो प्रामाणिक एवं संक्षिप्त रचनाओं का पुनर्मुद्रण कर रही है, जो शीघ्र प्रकाश्य हैं। हम विद्वानों के सहयोग के आकांक्षी हैं, जिससे यह संस्था अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सक्षम हो सके।

—राजेन्द्रकुमार जैन

वर्द्धमान महावीर गौतम बुद्ध की भाँति नितान्त ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। माता-पिता के द्वारा उन्हें भी हाड़-मांस का शरीर प्राप्त हुआ था। अन्य मानवों की भाँति वे भी कच्चा दूध पीकर बढ़े थे; किन्तु उनका उदात्त मन अलौकिक था। तम और ज्योति, सत्य और अनृत के संघर्ष में एक बार जो मार्ग उन्होंने स्वीकार किया, उस पर दृढ़ता से पैर रखकर हम उन्हें निरन्तर आगे बढ़ते हुए देखते हैं। उन्होंने अपने मन को अखण्ड ब्रह्मचर्य की आँच में जैसा तपाया था, उसकी तुलना में रखने के लिए अन्य उदाहरण कम ही मिलेंगे। जिस अध्यात्म केन्द्र में इस प्रकार की सिद्धि प्राप्त की जाती है, उसकी धाराएँ देश और काल में अपना निस्सीम प्रभाव डालती हैं। महावीर का वह प्रभाव आज भी अमर है।

—डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल

आद्य मिताक्षर

घर-घर में महावीर की कथा,
अन्यथा सब व्यथा ॥

परम पूज्य मुनि श्री विद्यानन्दजी महाराज का सान्निध्य मुझे १९६५ में आगरा में उनके मंगल विहार के समय प्राप्त हुआ, तब से निरन्तर मुझे उनका वात्सल्य प्राप्त होता रहा है। गुणीजनों के प्रति उनके हृदय में सहज वात्सल्य भाव है। उनकी प्रवृत्ति अनुसन्धानोन्मुखी रही है। मैं पिछले नौ वर्षों में जब भी उनके सम्पर्क में रहा, निरन्तर उनके स्वाध्याय के फल, ज्ञान का लाभ प्राप्त करता रहा। प्रस्तुत लघु कृति उनके प्रबुद्ध निर्देशन में लिखी गई है। इसमें उनकी 'तीर्थंकर वर्द्धमान' नामक सद्यः प्रकाशित रचना से बहुत कुछ सहायता ली गई है। श्रमणसंस्कृति, जैन-इतिहास एवं साहित्य के सम्बन्ध में मेरा ज्ञान मुनिश्री जी के शिष्यत्व का प्रसाद है। अतः जो कुछ है वह गुरुदेव का है और उन्हीं की कृपा से उपलब्ध हुआ है। मैं उनके प्रति आभार व्यक्त करना भारतीय संस्कृति के विरुद्ध समझता हूँ। मैं तो उनका चिर-ऋणी रहना चाहता हूँ।

मुनिश्री मानव-मिलन के महान् प्रेरक एवं केन्द्र-बिन्दु हैं। उनकी अलौकिक प्रतिभा से बड़े-बड़े विद्वान् उनके समक्ष नत मस्तक होते रहे हैं। उनकी चरण-वन्दना करके हमारा हृदय कमल खिल उठता है, निर्मल परिणति को प्राप्त होता है। उनसे प्राप्त ज्ञानामृत से मुझे जीवन की नवीन दिशा मिली है।

तीर्थङ्कर महावीर ऐतिहासिक महापुरुष थे। उनका जन्म विश्व के प्राचीनतम वैशाली गणतन्त्र में हुआ था। वैशाली गणतन्त्र को कविवर दिनकर ने जनतन्त्र की माता कहा है। महावीर के कारण वैशाली गौरवान्वित हुई और महावीर के 'अहिंसा परमोधर्मः' सिद्धान्त के कारण भारत समस्त विश्व का आध्यात्मिक गुरू बना। इसी सिद्धान्त को जीवन में अपनाकर महात्मा गांधी ने भारत को स्वतन्त्र कराया। वैशाली की पुण्यभूमि ने विश्व-मानव के त्राता, जैन धर्म के उन्नायक, इक्ष्वाकु-कुल केशरी को जन्म दिया है। हमारा कर्तव्य है कि हम उस वैशाली को मस्तक नवाते हुए किसी समय की महान् वैभवशालिनी नगरी का जीर्णोद्धार करें। तभी २५०० वाँ महावीर परिनिर्वाणोत्सव का आयोजन सफल कहा जा सकता है। जय वैशाली, जय वीर।

विनम्र
जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल

अनुक्रम

वैशाली	७
वर्द्धमान-महावीर : कुछ तथ्य	८
तीर्थङ्कर महावीर पंच-कल्याणक स्तुति	९
जीवन रेखा	१३
वर्द्धमान का जन्म-कल्याणक	१६
बाललीलाएँ	१७
सन्मति नामान्तर	१९
आत्मचिन्तन में लीन	१९
जीवन्त-स्वामी प्रतिमा	२०
संसार से विरक्ति	२२
विवाह-प्रसंग	२२
दीक्षा कल्याणक	२३
केवलज्ञान कल्याणक	२४
समवशरण	२५
मंगल विहार	२८
उपदेश एवं तत्त्व-ज्ञान	२८
सार्वभौमिक सिद्धान्त	२९
अनेकान्त-स्यादवाद	३०
धर्मचक्र	३२
पावानगरी में परिनिर्वाण	३३
वर्तमान युगबोध और महावीर	३५
महावीर वाणी	३८
परिशिष्ट १	४०
परिशिष्ट २	४३
महावीर-वन्दना	४४
श्री महावीराष्टकस्तोत्रम्	४५

वैशाली

श्री रामधारीसिंह दिनकर

ओ भारत की भूमि बन्दिनी ! ओ जंजीरों वाली ।
तेरी ही क्या कुक्षि फाड़कर जन्मी थी वैशाली ?
वैशाली ! इतिहास-पृष्ठ पर अंकन अंगारों का
वैशाली ! अतीत-गह्वर में गुंजन तलवारों का
वैशाली ! जन का प्रतिपालक, गण का आदि विधाता !
जिसे ढूंढता देश आज उस प्रजातन्त्र की माता
रुको, एक क्षण पथिक ! यहाँ मिट्टी को शीश नवाओ
राज सिद्धियों की समाधि पर फूल चढ़ाते जाओ
डूबा है दिनमान इसी खँड़हर में डूबी राका
छिपी हुई है यहीं कहीं धूलों में राजपताका
ढूँढ़ो उसे जगाओ उनको जिनकी ध्वजा गिरी है
जिनके सो जाने से सिर पर कालो घटा घिरो है
कहो, जगाती है उनको बन्दिनी बेड़ियों वाली
नहीं उठे वे तो न बसेगी किसी तरह वैशाली

× × ×

फिर आते जागरण-गीत टकरा अतीत-गह्वर से
उठती है आवाज एक वैशाली के खँड़हर से
"करना हो साकार स्वप्न को तो बलिदान चढ़ाओ
ज्योति चाहते हो तो पहले अपनी शिखा जलाओ
जिस दिन एक ज्वलन्त पुरुष तुम में से बढ़ आयेगा
एक-एक कण इस खँड़हर का जीवित हो जायेगा
किसी जागरण की प्रत्याशा में हम पड़े हुए हैं
लिच्छवि नहीं मरे, जीवित मानव ही मरे हुए हैं ।"

('वैशाली अभिनन्दन ग्रन्थ' से साभार उद्धृत)

तीर्थंकर वर्द्धमान-महावीर का संक्षिप्त परिचय

१. शुभ नाम	वर्द्धमान, महावीर, अतिवीर, सन्मति, वीरप्रभु, वैशालिक, वैदेहिक, निग्गण्ठनात पुत्त
२. जाति	क्षत्रिय
३. गोत्र	काश्यप
४. वपु: कान्ति:	स्वर्ण वर्ण
५. वंश	ज्ञातृवंश
६. धर्म	अर्हंत
७. चिन्ह	सिंह
८. पितृ नाम	सिद्धार्थ
९. जननी	त्रिशला प्रियकारिणी
१०. गर्भावतरण	आषाढ़ सुदी ६, उत्तरहस्ता नक्षत्र, शुक्रवार १७ जून ५९९ ई० पू०
११. जन्म कल्याण	चैत्र सुदी १३, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र, सोमवार २७ मार्च ५९८ ई० पू०
१२. जन्म स्थान	कुंडग्राम वैशाली
१३. व्रत	पंच महाव्रत
१४. दीक्षा	ज्ञातृखण्डवन, उत्तरहस्ता नक्षत्र मगशिर कृष्ण १० सोमवार २९ दिसम्बर ५६९ ई० पू०
१५. तप-कल्याण	शालवृक्ष के नीचे, वैशाख सु० १०, उत्तरहस्ता नक्षत्र रविवार २६ अप्रेल ५५७ ई० पू०
१६. केवलज्ञान कल्याण	ऋजुकूला नदी तट
१७. गणधर	गौतमादि एकादश
१८. प्रधान श्रोता	बिम्बसार (श्रेणिक)
१९. निर्वाण स्थल	मध्यमा पावानगर
२०. आयुष्य प्रमाण	बहत्तर वर्ष
२१. वैराग्य निमित्त	अनिमित्तिक
२२. निर्वाण तिथि	शक संवत् ६०५ वर्ष पूर्व, स्वाति नक्षत्र, मंगलवार १५ अक्टोबर ५२७ ई० पू०
२३. निर्वाणोत्सव	हस्तिपाल राजा की उपस्थिति में
२४. आन्विक्षिकी	गणतन्त्र
२५. प्रधान श्रमणा	चन्दना सती
२६. सिद्धान्त	स्याद्वाद (अनेकान्त)

तीर्थङ्कर-महावीर पंच-कल्याणक स्तुति

आर्या छन्द

विबुधपति - खगप-नरपति - धनदोरग- भूतयक्षपति-महितम् ।
अतुलसुख विमल निरुपम शिवमचलमनामयं संप्राप्तम् ॥१॥
कल्याणैः संस्तोष्ये पञ्चभिरनघं त्रिलोक परमगुरुम् ।
भव्यजनतुष्टि जननैर्दुरवापैः सन्मति भक्त्या ॥२॥

गर्भकल्याणक-वर्णन

आषाढसुसितषष्ठयां हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते शशिनि ।
आयातः स्वर्गसुखं भुक्त्वा पुष्पोत्तराधीशः ॥३॥
सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे ।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान्संप्रदर्श्य विभुः ॥४॥

जन्मकल्याणक-वर्णन

चैत्रसितपक्षफाल्गुनि शशांकयोगे दिने त्रयोदश्याम् ।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ॥५॥
हस्ताश्रिते शशांके चैत्र ज्योत्स्ने चतुर्दशी दिवसे ।
पूर्वाण्हे रत्नघटैः विबुधेन्द्राश्चक्रुरभिषेकम् ॥६॥

दीक्षाकल्याणक-वर्णन

भुक्त्वा कुमारकाले त्रिंशद्वर्षाण्यनंत गुणराशिः ।
अमरोपनीत भोगान्सहसाभिनिबोधितोन्येद्युः ॥७॥
नानाविधरूपचितां विचित्रकूटोच्छ्रितां मणि विभूषाम् ।
चन्द्रप्रभाख्यशिविकामारुह्य पुराद्विनिःक्रान्तः ॥८॥

मार्गशिरकृष्णदशमीहस्तोत्तर मध्यमाश्रिते सोमे ।
षष्ठेन त्वपराह्णे भक्तेन जिनः अवव्राज ॥९॥

ज्ञानकल्याणक-वर्णन

ग्रामपुरखेटकर्वटमटंब घोषाकरान्प्रविजहार।
उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादश वर्षाण्यमरपूज्यः ॥१०॥
ऋजुकूलायास्तीरे शालद्रुमसंश्रिते शिलापट्टे ।
अपराण्हे षष्ठेनास्थितस्य खलु जृंभकाग्रामे ॥११॥
वैंमाखसितदशम्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते चन्द्रे ।
क्षपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम् ॥१२॥

दिव्यध्वनि

अथ भगवान् संप्रापद्दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम् ।
चातुर्वर्ण्यं सुसंघस्तत्राभूद् गौतम प्रभृति ॥१३॥
छत्राशोकौ घोषं सिंहासन दुंदभी कुसुमवृष्टिम् ।
वरचामर भामंडलदिव्यान्यन्यानि चावापत् ॥१४॥
दशविधमनगाराणामेकादशधोत्तरं तथा धर्मम् ।
देशयमानो व्यहरंस्त्रिंशद्वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः ॥१५॥

निर्वाण कल्याणक-वर्णन

पद्मवनदीर्घिकाकुल विविधद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये ।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः मुनिः ॥१६॥
कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहृत्य कर्मरजः ।
अवशेषं संप्रापदव्यजरामरक्षयं सौख्यम् ॥१७॥
परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं ज्ञात्वा विबुधा ह्याथाशु चागम्य ।
देवतरुरक्तचन्दन कालागुरु सुरभिगोशीर्षैः ॥१८॥
अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभिधूपवरमाल्यैः ।
अभ्यर्च्य गणधरानपि गता दिव्यं खं च वनभवने ॥१९॥
पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे ।
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ॥

श्रीवर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो।
निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा ॥२४॥

इत्येवं भगवति वर्धमानचन्द्रे
यः स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि ॥
सोऽनन्तं परम सुखं नृदेवलोके।
भुक्त्वान्ते शिवपदमक्षयं प्रयाति ॥
यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां।
निर्वाणभूमिरिह भारतवर्षजानाम् ॥
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः।
संस्तोतुमुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ॥
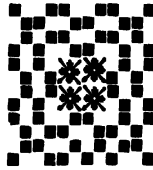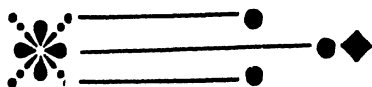
महावीरं शरणं गच्छामि

'णाणं सरणं मे दंसणं च सरणं च चरिय सरणं च ।
तवसंजमं च सरणं भगवं सरणं महावीरो ॥—

—आचार्य कुन्द-कुन्द, मूलाचार ५६ | ६३

'पदार्थ के सत्य स्वरूप का दिग्दर्शक ज्ञान ही मेरा शरण या रक्षक है। चार गुणों से युक्त सम्यग्दर्शन संसार से मेरा रक्षण करता है। मिथ्यात्व-त्यागी ज्ञानीपुरुष का चरित्र मेरा सहायक है। बारह प्रकार का तप मेरा रक्षक है। भगवान् अनन्तज्ञान-सुख-सम्पन्न तीर्थङ्कर महावीर स्वामी मेरे रक्षक हैं।'

काश्यपगोत्र, आदिसूत्र,
पद्मयोनिप्रवर,
इक्ष्वाकुवंशकेशरी,
नाथकुल के मुकुटमणि,
लिच्छिवी जाति के
प्रदीप
श्रमणधर्म के दर्पण,
प्रातःस्मरणीय

ऐतिहासिक महापुरुष :

वर्द्धमान महावीर

'तिलोए सव्वजीवाणं हिद धम्मोवेददसिणं ।
वड्ढमाणं महावीरं वंदेहं सव्ववेदिणं ॥'

'मैं तीन लोक के समस्त जीवों के हितकर, धर्मोपदेशदाता, सर्वज्ञ वर्द्धमान महावीर का वन्दन करता हूँ ।'

जीवन रेखा:

ज्ञातृवंश रूपी पद्मसरोवर के राजहंस

विदेह देश स्थित[1] लिच्छवि गणतन्त्र भारत का प्राचीनतम उज्जवल

---

(१) (i) अथ देशोस्ति विस्तारी जम्बूद्वीपस्य भारते ।
विदेह इति विख्यातः स्वर्गखण्ड समः प्रियः ॥—हरिवंश १/२
(ii) आरज खण्ड विदेह सुदेश । बसे सुजन सब उत्तम वेष ।
—मनसुखसागर चउपई ।

गणराज्य था ।[1] इस गणराज्य के प्रमुख राजा चेटक इतिहास प्रसिद्ध यशस्वी क्षत्रिय थे। इनका गणतन्त्र इतना सुदृढ़ था कि इन्होंने अजातशत्रु से १४ वर्ष तक वीरतापूर्वक लोहा लिया। इस गणतन्त्र की एकता एवं संगठन से गौतम बुद्ध भी प्रभावित थे। उन्होंने लिच्छिवियों की समता देवताओं से की है। राजा चेटक के एक अत्यन्त सौम्य स्वभाव वाली त्रिलोकसुन्दरी त्रिशला नामक कन्या थी।[2] उसके शील सौजन्य को देखकर माता-पिता ने उसका एक अन्य नाम प्रियकारिणी रखा। उसका यह नाम उसके सद्गुणों के अनुरूप था। जब वह युवावस्था को प्राप्त हुई तो चेटक महाराज ने उसका विवाह भूपाल शिरोमणि कुण्डग्राम पुरस्वामी राजा सिद्धार्थ के साथ कर दिया।[3]

---

१. सभी प्राचीन भारत के इतिहासकारों ने लिच्छिवि गणतन्त्र को भारत का प्राचीनतम गणराज्य माना है। लिच्छिवियों की एक शाखा, अजातशत्रु के द्वारा इस गणतन्त्र का विध्वंश कर देने पर, तिब्बत चली गई और वहाँ राज्य किया। लिच्छिवियों ने ई० पू० ५०० से ईसवी ५०० तक नेपाल में राज्य किया। देखिए— Bihar Through The Ages—R. R. Diwakar, p.45 तथा Travels of Hucon Tshang, Samual Beel Vol. I.

२. चेटक की सात पुत्रियों में त्रिशला ज्येष्ठा थी। उसकी अन्य पुत्रियों में चेलना मगध-नरेश श्रेणिक बिम्बसार को, दूसरी कौशाम्बी नरेश शतानीक के साथ, तीसरी दशार्ण के राजा दशरथ के साथ, चौथी सिन्धु-सौवीर के महाराज उदयन के साथ और पांचवी अवन्ती नरेश चण्डप्रद्योत के साथ विवाही थीं। सातों कन्यायों के नाम इस प्रकार हैं—त्रिशला, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलना, ज्येष्ठा, और चन्दना। लखनऊ पुरातत्व संग्रहालय में रानी त्रिशला की प्राचीन प्रतिमा है।

—संग्रह सं० J ६२६ है।

३. भूपाल मौलि-माणिक्यः सिद्धार्थो नाम भूपतिः।
कुण्डग्राम पुरवासि तस्य पुत्रो जिनोऽस्तु॥

—काव्यशिक्षा ३१

—कुण्डग्राम नगर के नृपति सिद्धार्थ राजाओं के मुकुटमणि हैं। उनके पुत्र जिनेन्द्र महावीर स्वामी हमारी रक्षा करें।

कुण्डपुर अर्थात् कुन्डलपुर में राजा सिद्धार्थ का सात मंजिल का नन्द्यावर्त नामक राजप्रासाद था।[1] राजा सिद्धार्थ अपनी नवपरिणीता रानी त्रिशला के साथ उस राजप्रासाद में ऋषभदेव और पार्श्वनाथ आदि तीर्थंकरों की भक्ति-पूजा करते हुए अत्यन्त सुखपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे। तभी एक शुभ दिवस आषाढ़ शुक्ला ६ शुक्रवार तदनुसार १७ जून ई०पू० ५९९ को प्रियकारिणी त्रिशला ने रात्रि के अन्तिम प्रहर में सोलह शुभ स्वप्न देखे। वे इस प्रकार थे—गर्जन करता हुआ ऐरावत हाथी, बैल, सिंह, हाथी के द्वारा कलशाभिषिक्त लक्ष्मी, लटकती हुई दो पुष्प मालाएं, चांदनी युक्त चन्द्रमा, उदित होता सूर्य, सरोवर में क्रीड़ा करती हुई दो मछलियां, दो स्वर्ण कलश, पद्मसरोवर, लहरयुक्त समुद्र, रत्नजटित देवविमान, नागेन्द्र भवन, प्रकाशमान रत्नराशि, धूमरहित प्रखर अग्निज्वाला।[2]

प्रातःकाल प्रसन्नवदना त्रिशला अपने स्वामी राजा सिद्धार्थ के पास पहुँची और उनसे अपने स्वप्नों का फल पूछा।[3] राजा सिद्धार्थ ज्योतिष विद्या में निष्णात थे। उन्होंने विचार करके बताया—'रानी! तुम्हारे गर्भ में एक महान आत्मा अवतरित हुई है जो जन्म लेकर आत्म-कल्याण करते हुये विश्व एवं प्राणीमात्र का महान् कल्याण करेगा।[4] वह विश्व में हिंसा, चोरी आदि अनेक दुष्कर्मों से ग्रस्त एवं दुःखी प्राणियों का कल्याण करके श्रेयस्कर

१. नन्द्यावर्त अर्थात् सतत आनन्द प्रदान करने वाला। कुन्डपुर बिहार के नवीनतम निर्मित वैशाली जिले में है। वैशाली ही महावीर की जन्म-भूमि है, ऐसा नवीन अनुसन्धान द्वारा सिद्ध किया जा चुका है।
An early History of Vaisali : Dr. Yogendra Misra

२. माता यस्य प्रभाते करिपति वृषभौ सिंहपोतं च लक्ष्मीं।
मालायुग्मं शशांकं रवि झषयुगले पूर्ण कुम्भौ तटाकं॥
पाथोधिं सिंहपीठं सुरगणनिभृतं व्योमयानं मनोज्ञं।
चा द्राक्षीन्नागवासं मणिगण शिखिनौ तं जिनं नौमि भक्त्या॥

३. रानी त्रिशला की सोलह स्वप्नों को देखते हुए एक प्रतिमा लखनऊ पुरातत्व संग्रहालय में है।

४. तीर्थङ्कर की माता एक ही पुत्र की जननी होती है।

मोक्षमार्ग का प्रदर्शन करेगा।'[१] रानी का मन प्रफुल्लित हो उठा। सहसा उसके मुख से हृदय की बात फूट पड़ी—'क्या ! सच ! मैं ऐसे महान् पुत्र की जननी बनूंगी ? रानी त्रिशला के हृदय की उस समय की प्रफुल्लता का अनुभव कौन कर सकता है ? उनका शुभ्र हृदय-कमल खिल उठा, मन-मन्दिर एक दिव्य आलोक से प्रकाशित हो उठा।[२]

वर्द्धमान का जन्म कल्याणक

इन्द्र ने गर्भवती माता त्रिशला की सेवा में ५६ दिव्य कुमारी देवियाँ भेजीं। धीरे-धीरे वह शुभ समय आ पहुंचा जब विश्व को अहिंसा का परम-विशुद्ध मार्ग दिखलाने वाले वर्द्धमान महावीर सिद्धार्थी संवत्सर में चैत्र शुक्ला १३ सोमवार तदनुसार २७ मार्च ई० पू० ५९८ को माता के गर्भ से अवतरित हुए।[3] देवताओं ने प्रसन्न होकर नन्द्यावर्त राजप्रासाद[४] तथा कुन्डलपुर नगर पर रत्नों की वर्षा की। राज्य में चारों ओर खुशहाली छा गयी। शस्य श्यामला भूमि मानो वर्द्धमान के जन्म के अवसर पर अपने हृदय की प्रफुल्लता व्यक्त कर रही थी। राजप्रासाद में भी दिन-प्रतिदिन सुख और शान्ति की अभिवृद्धि होने लगी और इसे लक्ष्य कर माता-पिता ने बालक का नाम वर्द्धमान—सतत बढ़ने वाला तथा बढ़ाने वाला—रखा। प्रजा ने बड़े हर्षोल्लास से

---

१. आचाराणां विघातेन कुदृष्टीनां च सम्पदाम्।
धर्मग्लानि परिप्राप्तमुच्छ्रयन्ते जिनोत्तमाः॥''
—पद्मपुराण ५।२०६

२. विदेहविषये कुण्डसंज्ञायां पुरि भूपतिः।
नाथो नाथकुलस्यैकः सिद्धार्थाख्यास्त्रिसिद्धिभाक्।
तस्य पुण्यानुभावेन प्रियासीत्प्रियकारिणी॥
—उत्तरपुराण, ७५।७-८

३. चैत्र सित पक्ष फाल्गुनि शशांक योगे दिने त्रयोदश्याम्।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने॥—निर्वाण भक्ति, ६

४. नन्द्यावर्तो निवेशोऽस्य शिबिरस्याल धीयसः।
प्रासादो वैजयन्ताख्यो यः सर्वत्र सुखावहः॥
—आचार्य जिनसेन, आदिपुराण ३३।१४७

कुमार का जन्मोत्सव मनाया। अनेक राजा एकत्र हुये, जिनमें कलिंग के राजा जितशत्रु भी थे।[1]

वर्द्धमान की बाल लीलाएं : आमली क्रीड़ा

बालक वर्द्धमान जन्म से ही महान् तेजस्वी थे। उनके जीवन की अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाओं की चर्चाएँ हमें पुराणों में मिलती हैं। संगम देव द्वारा उनके धैर्य की परीक्षा की घटना इस प्रकार है—एक बार बालक वर्द्धमान आठ राजकुमारों के साथ वटवृक्ष के नीचे आमली क्रीड़ा कर रहे थे। (यह वृक्ष पर दौड़कर चढ़ने एवं साथियों को छूने का खेल है) इसी बीच संगमदेव देवसभा में वर्द्धमान की वीरता की चर्चा सुनकर उनकी परीक्षा लेने आ गया। उसने सर्प का रूप धारण करके कुमार को डराना चाहा। कुछ राजकुमार भाग गये और कुछ राजकुमार वर्द्धमान के साथ वहीं डटे रहे। कुमार वर्द्धमान ने निर्भीक मन से उस भयंकर सर्प को पकड़कर सहज भाव से दूसरी ओर छोड़ दिया। वर्द्धमान के धैर्य से संगमदेव बहुत प्रभावित हुआ। उसने अपना रूप धारण करके उनकी स्तुति की और उन्हें अपने दाहिने कन्धे पर चढ़ाकर प्रसन्नता से नाचने लगा। उसने कुमार वर्द्धमान का नाम महावीर रखा। इस प्रकार कुमार वर्द्धमान बचपन ही से निडर थे। वे वीर, अतिवीर एवं महावीर थे। वे देवकुमारों एवं राजकुमारों के साथ वट-वृक्ष के नीचे खेला करते थे।[2] असग महाकवि ने 'वर्द्धमान चरित्र' में संगमदेव की घटना का वर्णन किया है।[3]

१. भवान्न किं श्रेणिक वेत्ति भूपतिं नृपेन्द्रसिद्धार्थकनीयसीपतिम्।
इमं प्रसिद्धं जितशत्रुमाख्यया प्रतापवन्तं जितशत्रुमण्डलम्॥
जिनेन्द्रवीरस्य समुद्भवोत्सवे तदागतः कुण्डपुरं सुहृत्परः।
सुपूजितः कुण्डपुरस्य भूभृता नपोऽयमाखण्डलतुल्यविक्रमः॥
—उत्तरपुराण, ६६ सर्ग ६, ७.

२. कुमार वर्द्धमान के कुमारकाल की आमली क्रीड़ा की एक प्राचीन प्रतिमा लखनऊ के पुरातत्त्व संग्रहालय में है। यह ईसवी प्रथम शती की है। एक अन्य शिलापट्ट मथुरा पुरातत्व संग्रहालय में कुषाणकाल का है। इसमें वर्द्धमान अपने बाल सखाओं के साथ क्रीड़ारत हैं। मथुरा पुरातत्त्व संग्रहालय की उक्त शिलापट्ट-प्रतिमा में संगमदेव कुमार वर्द्धमान को दाएं कन्धे पर और एक अन्य कुमार को बाएं कन्धे पर चढ़ाए हुये नाच रहा है। मथुरा संग्रहालय का संग्रह सं० १११५ आठ इंच का शिलापट्ट है।

३. वटवृक्षमथैकदा महान्तं सह डिंभैरधिरुह्य वर्द्धमानम्।
रममाणमुदीक्ष्य संगमाख्यो विबुधस्त्रासयितुं समाससाद॥७।६५

संगमदेव (बकरे जैसे मुखवाला)[1]

चार राजकुमार क्रीड़ारत, कुण्डलपुर (वैशाली)

१—कुमार वर्द्धमान, २—कु० चलधर, ३—कु० काकधर, ४—कु० पक्षधर।

—वर्द्धमान पुराणम्, सेनापतिचामुण्डराय कृत

---

१. यमुना, मथुरा से प्राप्त आठ इंच की मूर्ति का शिलापट्ट, मथुरा पुरातत्त्व संग्रहालय, सग्रह सं० १११५ (हरीनाई गनेश) कुषाणकालीन प्रतिमा। वर्द्धमान पुराण (सेनापति चामुण्डरायकृत, कन्नड भाषा, पृ० २९१) के अनुसार कुमार वर्द्धमान के साथ क्रीड़ारत तीन अन्य कुमारों के नाम इस प्रकार हैं—कुमार चलधर, कुमार काकधर, कुमार पक्षधर।

सन्मति नाम पड़ा

कुमार वर्द्धमान बालपन से ही तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि) के धारी थे, अतः उन्हें शिक्षा ग्रहण करने की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ी। पुराणों में कुमार वर्द्धमान के मेधावी एवं सन्मति होने की चर्चा मिलती है। उन्होंने संजय और विजय दो मुनियों की शंकाओं का निरसन किया। एक बार जब वे झूले में झूल रहे थे, तो वर्द्धमान के रूप में तीर्थंकर के जीव के आने की बात जानकर दो मुनि कुछ शंका लेकर आए। परन्तु बालक वर्द्धमान को दूर से देखते हुए उनकी शंका का निरसन हो गया। वे अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और वर्द्धमान का नाम तभी से सन्मति विख्यात हुआ।[1] यह नाम उन दोनों मुनियों के द्वारा रखा गया था।

आत्मचिन्तन में लीन

कुमार वर्द्धमान अत्यन्त मनस्वी एवं गम्भीर थे। वे नन्द्यावर्त राजप्रासाद में रहते हुए भी एकान्तप्रिय एवं विरक्त थे। वे उस वैभव में निर्लिप्त भाव से जल में कमलवत् रहते थे। प्रायः वे राजभवन के किसी एकान्त कक्ष में बैठे हुए ध्यानमग्न हो जाते थे और आत्मचिन्तन करते रहते थे। इस प्रकार वे निरन्तर अभिवृद्धि को प्राप्त होते हुए युवावस्था को प्राप्त हुए किन्तु उनमें संसार के भोगों के प्रति तनिक भी आसक्ति नहीं थी और न उनमें यौवनजन्य चित्तचांचल्य ही था। इस प्रकार उनका चिन्तन का यौवन था। उन्होंने यज्ञों के नाम पर की जाने वाली हिंसा पर विचार किया। सामाजिक जीवन की विषमता भी उनके कोमल मन के चिन्तवन का विषय बनी। वे मानव के हृदय में सोई हुई करुणा एवं विश्वमैत्री या जीव मैत्री की भावना को जागृत करने के लिये उपाय चिन्तन करने लगे। जीव दया के भावों ने क्षत्रिय राजकुमार वर्द्धमान के हृदय में करुणा-स्रोत बहा दिया। उनका चिन्तन दिनोंदिन बढ़ने लगा।

---

१. तत्वार्थनिर्णयात्प्राप्य सन्मतित्वं सुबोधवाक्।
पूज्यो देवागमाद्भूत्वात्राकलंकोबभूविथा॥
—उत्तरपुराण ७४।२

जीवन्त स्वामी प्रतिमा

राजकुमार महावीर की धातु प्रतिमा : बड़ोदा पुरातत्त्व संग्रहालय

चित्र-परिचय

अकोटा से प्राप्त धातु की बनी राजकुमार महावीर की मूर्ति के सम्बन्ध में पुरातत्त्वविदों का अनुमान है कि उनके जीवन काल में ही उनकी प्रतिमा बनाकर पूजा की जाने लगी थी। उनके जीवनकाल में यह प्रतिमाएँ चन्दन की लकड़ी की बनती थीं, बाद में ये धातु एवं पाषाण की भी बनने लगीं। पुराणों के आधार पर ही यह अनुमान लगाया गया है। प्राप्त प्रतिमा के सम्बन्ध में यह धारणा है कि यह राजकुमार महावीर के मुनि दीक्षा लेने से एकाध वर्ष पूर्व उस समय बनाई गई जब वे राजप्रासाद में ध्यान मुद्रा में खड़े थे। इसीलिए इस मूर्ति में एक राजमुकुट, कुछ आभूपण तथा शरीर के निचले भाग के वस्त्र महावीर के शरीर पर परिलक्षित होते हैं। महावीर के जीवन-काल की मूर्ति होने के कारण इसे जीवन्त-स्वामी-प्रतिमा के नाम से जाना जाता है। यह धातु की आकर्षक प्रतिमा बड़ोदा के म्यूजियम में सुरक्षित रखी हुई है। इसका कलात्मक एवं आकर्षक मुकुट अपने ढंग का निराला है। आभूपणों का विवरण इस प्रकार है।

राजकुमार वर्द्धमान-महावीर के आभूषण

धृत्वा शेखर पट्टहार पदकं ग्रैवेयकालंबकम् ।
केयूरागंदमध्य बंधुर कटीसूत्रं च मुद्रान्वितम् ॥
चंचत्कुंडलकर्णपूरममलं पाणिद्वये कंकणम् ।
मंजीरं कटकं पदे जिनपतेः श्रीगंधमुद्रांकितम् ॥

राजकुमार महावीर निम्नांकित षोडस आभरण पहनते थे—

१—शेखर	२—पट्टहार	३—पदक	४—ग्रैवेयक
५—आलंबक	६—केयूर	७—अंगद	८—मध्यबंधुर
९—कटीसूत्र	१०—मुद्रा	११—चंचल कुण्डल	१२—कर्णपूर
१३—कंकण	१४—मंजीर	१५—कटक	१६—श्रीगंध

संसार से विरक्ति

वर्द्धमान को अनिमित्तिक वैराग्य हो गया। उन्हें विरागभाव-हेतु बाह्य-हेतु की अपेक्षा नहीं थी। उन्हें अपने पूर्वभव का स्मरण हो आया, जब उन्होंने संयम से तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया था। संसार में बढ़ते हुए पाप और अज्ञान को दूर करने के लिए, स्वयं शुद्ध-बुद्ध बनने हेतु उन्होंने ब्रह्मचर्य धारण किया। उन्होंने निश्चय किया कि मुझे मोह ममता के कीचड़ से बाहर निकलकर आत्मविकास करना चाहिए।[1]

विवाह से इन्कार

जब कुमार वर्द्धमान पूर्ण यौवनावस्था को प्राप्त हुए तो उनका सुकोमल धवलाभ शरीर कान्ति से जगमगाने लगा। वे अत्यन्त कोमल, मनोज्ञ एवं गंभीर थे। कलिंग के राजा जितशत्रु ने अपनी त्रिलोकसुन्दरी सुपुत्री राजकुमारी यशोदा का विवाह कुमार वर्द्धमान से करने का प्रस्ताव भेजा। राजा सिद्धार्थ और रानी त्रिशला को इस प्रस्ताव को प्राप्तकर बहुत प्रसन्नता हुई, किन्तु कुमार वर्द्धमान को कैसे सहमत किया जावे। पिता सिद्धार्थ ने ही कुमार से विवाह करके गृहस्थ धर्म पालन करने के लिए कहा—'प्रिय वर्द्धमान ! अब तुम पूर्ण युवा हो गए हो। राजा जितशत्रु की सुशीला एवं सुन्दरी कन्या से विवाह करके वंश परम्परा को गतिमान करो।'[2]

राजकुमार वर्द्धमान ने अत्यन्त शालीनता एवं विनम्रता से कहा—पिताश्री ! मैं विवाह नहीं करना चाहता।[3] मैं अपने नश्वर

---

१. अथ मन्मतिरेकदाऽनिमित्तं, विषयेभ्यो भगवानभूद्विरक्तः।
प्रशमाय सदा न बाह्यहेतुं, विदितार्थस्थितिरीक्षते मुमुक्षुः॥
—असग, वर्द्धमानचरित्र ७।१०२

२. एक राजकन्या वरो, करो उचित व्यवहार।
बंसबेल आगे चले, सुख पावे परिवार॥
नाभिराज की आस ज्यौं, भई प्रथम अवतार।
तथा हमारी कामना, पूरन करो कुमार।

३. पिता वचन सुनि प्रभु दियौ प्रति उत्तर तिहिं बार।
रिषभदेव सम मैं नहीं, देखौ हिये विचार॥
मेरी सब सौ वर्ष थिति, सोलह भये बितीत।
तीस वर्ष संजम समय, फिर मत कहो पुनीत॥

शरीर को अमरत्व प्राप्ति की साधना में लगाना चाहता हूं। मैं अपना आत्मकल्याण करके मानव जीवन की सार्थकता सिद्ध करना चाहता हूं। भावी तीर्थंकर को माता-पिता अपनी बात से सहमत न कर सके। वे विरक्त मन वाले वर्द्धमान को किसी भी प्रकार संसार के प्रति अनुरक्त न बना सके। राजकुमार वर्द्धमान के जीवन में वह स्वर्णिम काल था। पूर्ण यौवन लहरा रहा था किन्तु वे संसार के आकर्षणों की तरंगों से अस्पृश्य थे। वे तो बाल्यकाल से ही संयम का सुन्दर ढंग से पालन कर रहे थे।[1] आचार्य आशाधर सूरि के शब्दों में—

बालत्वे संयम सुपालितं। मोहमहानलमथनविनीतं।

पुराणों में उल्लेख मिलता है कि एक दिन कुमार प्रासाद के एकान्त कक्ष में बैठे चिन्तनरत थे, तभी उनके समक्ष लौकान्तिक देव उपस्थित हुए और उन्हें स्मृति दिलाई। उन्होंने कहा—हे प्रभु! आप तो संसार के जीवों का उद्धार करने के लिए अवतरित हुए हैं। आप तपश्चर्या करके कर्मक्षय के द्वारा उस अक्षय पद को प्राप्त करें, जिसे 'सिद्ध पद' कहते हैं।

दीक्षा कल्याणक

'भुक्त्वाकुमारकाले त्रिंशद्वर्षाण्यनंतगुणराशिः।' (निर्वाण भ० ७) राजकुमार वर्द्धमान को अपने जीवन के उद्देश्य का स्मृति हो आई और वे भरी युवावस्था में २८ वर्ष ७ मास १२ दिन की आयु में देवताओं द्वारा लाई गई पालकी 'चन्द्रप्रभा' में बैठकर ज्ञातृवनखण्ड को चले गए। उन्होंने मगशिर कृष्णा १० सोमवार २९ दिसम्बर ५६९ ई० पू० के दिन महाभिनिष्क्रमण किया और पंचमुष्टी केशलोंच करके मुनि दीक्षा ले ली। वे दिगम्बर साधु बनकर तपश्चर्या में लवलीन हो गए—'दिक् अम्बर और तरुतल वास'। दो दिन की तपश्चर्या के उपरान्त उन्होंने प्रथम आहार (मुनि रूप में) राजा

१. अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः।
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः॥
स्फुरन्नित्यानंद प्रशमपदराज्याय स जिनो।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥'—महावीराष्टक, ७

बकुल के बकुल ग्राम स्थित राजभवन में लिया।[1] वैशाली से निकलकर वर्द्धमान ज्ञातृखण्डवन में एक स्वच्छ, निर्मल पाषाण शिला पर बैठकर तप करने लगे। उन्होंने शालवृक्ष के नीचे घोर तप किया। शालवृक्ष ऊर्ध्वगामी होता है, मानो वह मोक्ष जाने के लिए सिद्ध शिला का संकेत करता है—

सालश्चैते जिनेन्द्राणां दीक्षावृक्षा प्रकीर्तिताः।

केवलज्ञान कल्याणक

मुनि वर्द्धमान-महावीर ने बारह वर्ष तक कठिन तपश्चर्या की। भयंकर निर्जन वन में राक्षसी बाधाओं तथा ऋतु की प्रतिकूलताओं से वे तनिक भी विचलित न हुए। पुराणों में रुद्र के भयंकर उपसर्ग का वर्णन मिलता है। वह भी हार गया और उसने वर्द्धमान-महावीर को अतिवीर जानकर चरणों में मस्तक नवाया। तपश्चर्या करते हुए वर्द्धमान महावीर को ऋजुकूला नदी के तट पर वैशाख सुदी १० रविवार २३ अप्रेल ईसा पूर्व ५५७ के दिन केवलज्ञान की प्राप्ति हुई।[2] वे सर्वज्ञ बने। केवलज्ञान प्राप्त होने के बाद महावीर स्वामी ने मंगल-विहार किया और अनेक स्थलों पर इन्द्र ने समवशरण की रचना की किन्तु उनकी वाणी नहीं खिरी। पता चला कि गणधर के अभाव में दिव्यध्वनि नहीं खिर रही है। इसके पश्चात् विद्वान् ब्राह्मण इन्द्रभूति गौतम से महावीर के भक्त मिले।[3] वे कुछ शंकाएँ लेकर महावीर के

---

१. नृपतिबकुल घर पारण कीनो। (चौबीसी पूजा)
धर्मो महात्मा बकुलाभिधानः प्रवर्तितस्तैरवदानधर्मः।
—वरांगचरित्र ८०, पृ० २७३
कूलनाम महीपालो दृष्टवा तं भक्तिभावतः।—उत्तरपुराण, ७४

२. सोजयइ जस्स केवलणाणु..........कसायपाहुड (जयधवला)
'जिसके केवलज्ञान रूपी उज्ज्वल दर्पण में लोक और अलोक विशदरूप से प्रतिबिम्ब की तरह दिखाई देते हैं (झलकते हैं,) जो विकसित कमल के गर्भ की भाँति समुज्ज्वल एवं तप्त स्वर्ण की भाँति पीतवर्ण हैं, वे वीर भगवान् जयवन्त हों।

३. इन्द्रभूति गौतम वेद-वेदांग के ज्ञाता, महान् प्रतिभाशाली विद्वान् थे। उनके ५०० सुविज्ञ शिष्य थे। वे उस समय के प्रमुख और प्रसिद्ध विद्वान् माने जाते थे। किन्तु यह सब होते हुए भी ऐसा प्रतीत होता है, कि

समक्ष उपस्थित हुए किन्तु उनके दर्शनमात्र से ही शकाओं का निरसन हो गया और वे परम शिष्य बन गए। गौतम गणधर को लक्ष्य कर महावीर स्वामी ने राजगृह के विपुलाचल पर्वत पर प्रथम देशना (धर्मोपदेश) दी। उन्होंने अपने केवलज्ञान का प्रकाश जनता में फैलाने वाला धर्मोपदेश दिया। उनकी प्रथम देशना केवलज्ञान के ६६ दिन बाद श्रावण बदी १ रविवार, १ जुलाई ई० पू० ५५७ को हुई। समवशरण की रचना इन्द्र ने कराई।

समवशरण की रचना

इन्द्र ने कुबेर को विशाल व्याख्यान सभा मण्डप बनाने की आज्ञा दी। कुबेर ने दिव्य साधनों से अतिशीघ्र एक बहुत सुन्दर दर्शनीय विशाल सभा-मण्डप बनाया, जिसके तीन कोट और चार द्वार थे। द्वारों पर सुन्दर मान-स्तम्भ थे। बीच में ऊँची तीन कटनी वाली सुन्दर वेदिका (गन्ध कुटी) बनी थी। गन्धकुटी के चारों ओर १२ विशाल कक्ष थे, जिनमें बैठने का क्रम इस प्रकार था—श्रमण, ऋषिगण, स्वर्गवासी देवी, श्रमणा, व्यन्तर देवियाँ, भवनवासी देवियाँ, भवनवासी देव, व्यन्तर देव, स्वर्गवासी देव, मनुष्य और तिर्यञ्च (पशु-पक्षी) जीव। इसके अतिरिक्त आगन्तुक जनता की सुविधा के लिए अन्य मनोहर स्थान और साधन उस समवशरण में बनाये गये थे। मध्यवर्तिनी उच्च गन्धकुटी के सिंहासन पर तीर्थङ्कर महावीर के विराजमान होने की व्यवस्था थी, जिससे उनका उपदेश समस्त श्रोताओं को भली-भाँति सुनाई पड़े। उसी समय वहाँ देवों का दुन्दभी बाजा बजने लगा, जिसकी मधुर एवं आकर्षक ध्वनि बहुत दूर पहुँचती थी। उस दुन्दुभी की ध्वनि से लोगों को तीर्थङ्कर के समवशरण का पता चल गया और वे उत्कंठित हो दूर-दूर से ऋजुकूला नदी के तट पर बने उस समवशरण में पहुंचे। इन्द्र भी अपने

महावीर की देशना श्रवण करने से पूर्व उन्हें अध्यात्म विद्या का वास्तविक ज्ञान न हो पाया था। तीर्थंकर की देशना से उन्हें अध्यात्म के दर्शन हुए और तब उन्होंने महावीर की वाणी का प्रचार और प्रसार किया।

यः सारः सर्वसारेषु संसार एष गोतम।
सारं ध्यानमिति नाम्ना सर्वं बुद्धैर्दर्शितम्।—चूलिका ८

विशाल परिवार के साथ समवशरण में पहुंचा और वहाँ उसने तीर्थङ्कर के कैवल्य पद का महान् उत्सव किया तथा वन्दन, पूजन आदि के उपरान्त समवशरण की सुव्यवस्था की। वहाँ महान् प्रकाश के कारण रात-दिन का भेद नहीं जान पड़ता था। वहाँ परम शान्ति थी। वहाँ आए प्रत्येक प्राणी के हृदय में द्वेष, वैर, क्रोध, हिंसा की भावना जाग्रत न होती थी। वे सभी वहाँ आकर समताभावी जीव बन जाते थे।

गौतम गणधर को जैनधर्म और समाज में विशेष सम्मान प्राप्त हुआ।[1] महावीर स्वामी की दिव्यध्वनि अत्यन्त हितकारी, मधुर और स्पष्ट (विशद) थी। उन्होंने सीधी-सादी लोक भाषा में धर्मोपदेश अत्यन्त सरल ढंग से प्रस्तुत किया। उनकी बातें शीघ्र ही हर किसी के मन चढ़ जाती थीं। उनकी वाणी-सर्वग्राह्य प्राकृत भाषा में व्यक्त हुई, जो मार्दव गुण-सम्पन्न तथा लोकप्रिय थी।[2]

समवशरण की ओर

महावीर स्वामी के उपदेश केवल सीमित पण्डित वर्ग के लिए ही नहीं थे, वरन् आबाल वृद्ध, स्त्री-पुरुष सभी के लिए सुलभ थे। उनके समवशरण में मानवमात्र ही नहीं, जीवमात्र आकर उपदेश श्रवण करता था। उसमें देव, मनुष्य, पशु-पक्षी सभी सम्मिलित होते थे। महावीर स्वामी ने उसी समय मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध संघ की नींव डाली। उनके संघ में ११ गणधर, ७०० केवली, ५०० मनःपर्ययज्ञानी, १३०० अवधिज्ञानी, नौ सौ विक्रिया ऋद्धिधारक, चार सौ अनुत्तरवादी, ३६,००० साध्वी (श्रमणा) एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएँ थी।[3]

---

१. मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दाचार्यो जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम ॥

२. कन्नड भाषा के एक ग्रन्थ में तीर्थङ्कर महावीर का एक नाम "वसुधैव-बान्धव" लिखा है।

३. 'तीर्थङ्कर महावीर को अपने बहुत-से शिष्य बनाने की कोई इच्छा नहीं थी। हाँ, उनमें अपने उपदेश को चिरस्थायी बनाने की शक्ति थी। उन्होंने

महावीर के समवशरण में राजा श्रेणिक (बिम्बसार) प्रधान श्रोता के रूप में उपस्थित होता था ।[१] एक बार वह समवशरण में हाथी पर बैठकर जा रहा था, मार्ग में उसी ओर कमल की पंखुड़ी मुख में दबाए मेढ़क भी मिला। अचानक वह हाथी के पैर से कुचलकर मर गया किन्तु मरते समय अच्छे भावों से पूरित होने के कारण वह स्वर्ग गया। मेढ़क की यह कथा पुराणों में बहुत प्रसिद्ध है। साथ ही इससे यह द्योतित होता है कि भाव-विशुद्धि ही हमारी आध्यात्मिक साधना की उन्नति का कारण है।

चन्दना-उद्धार

जहाँ महावीर स्वामी के संघ में मगध सम्राट श्रेणिक, कौशलराज प्रसेनजित, लिच्छिवि नरेश चेटक थे, वहीं सकडाल जैसे कुम्हार भी थे। जहाँ उनके संघ में मृगावती, चेलना जैसी असूर्यपश्या रानियाँ थी, वहीं चन्दनबाला जैसी दासियाँ भी थीं। चन्दनबाला राजपुत्री होते हुए भी दासी की तरह बेची गयी थी, जिसका उद्धार महावीर स्वामी ने उसे अपने आर्यिका संघ की नेत्री बनाकर किया था। इससे उनकी अभूतपूर्व समता-दृष्टि का परिचय मिलता है।[२]

धर्म के सत्य एवं यथार्थ रूप का ज्ञान

महावीर स्वामी के धर्मोपदेश से जनता को धर्म के सत्य एवं यथार्थ रूप का ज्ञान हुआ। पशु-यज्ञों के विरोध में एक व्यापक लहर फैल गई और लोग हिंसा से घृणा करने लगे। यह धर्म प्रभावना अत्यधिक व्यापक थी। मगधनरेश श्रेणिक (बिम्बसार) महावीर स्वामी का परमभक्त बन गया। जनता मांस-

---

योजना और व्यवस्था शक्ति के आधार पर जिन संघ-नियमों को निर्धारित किया था, वे आज तक टिके हुए हैं।'

—डॉ० हेल्मुथ फॉन ग्लाजेनाप्प

१. 'मगध महाराजा श्रेणिक (बिम्बसार) पहिले बुद्ध का अनुमोदन करते थे। परन्तु बाद में वह तीर्थङ्कर भगवान् महावीर पर इतनी दृढ़ श्रद्धा लाये कि आगे वह स्वयं तीर्थङ्कर होंगे।' —डॉ० हेल्मुथ फॉन ग्लाजेनाप्प

२. महावीर स्वामी ने पुरुषों के समान स्त्रियों के विकास एवं आध्यात्मिक साधना के द्वार खोल दिये।

भक्षण एवं हिंसक कृत्यों से घृणा करने लगी। महावीर भगवान् के उपदेश से अज्ञान, भ्रम, अधर्म, अन्याय, अत्याचार, हिंसा कृत्य आदि पापाचार साधारण जनक्षेत्र से दूर होता गया और निरपराध मूक पशु-जगत को विशेष संरक्षण एवं जीवनदान मिला। महावीर स्वामी का जहाँ भी मंगल-विहार हुआ, वहाँ के शासक, मंत्री, सेनापति, पुरोहित, विद्वान् तथा अन्य साधारण जन उनके भक्त एवं अनुयायी बनते गए। इस प्रकार उनके संघ में सम्राट से लेकर कुम्हार तक सम्मिलित हुए। वे अपूर्व समताभावी थे।

मंगल विहार

भव्यजनों के प्रति सहज दयालुता से प्रेरित होकर एवं उनके पुण्ययोग से महावीर स्वामी ने भारत में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण सर्वत्र मंगल, विहार किया। प्रतिष्ठापाठ के अनुसार वे काशी, काशमीर, कुरु, मगध, कोसल, कामरूप, कच्छ, कलिंग, कुरूजांगल, किष्किन्धा, मल्लदेश, पांचाल, केरल, मद्र, चेदी, दशार्ण, वंग, अंग, आन्ध्र, उशीनर, मलय, विदर्भ, गौड़ आदि देशों में धर्मप्रभावना हेतु पधारे और वहाँ देशनार्थ प्रवचन किया।[1]

उपदेश एवं तत्त्वज्ञान

'भगवान् महावीर ने कहा दो मूल तत्त्व हैं—जीव और अजीव। लोक का समूचा विभाजन इन दो तत्त्वों में ही है जो पूर्णता तर्कसिद्ध है। जीव वह है जो जीता है, चाहे वह कीड़ा हो, मकोड़ा हो, फूल हो या बाग में फुदकती बुलबुल। घोड़ा और मानव सभी जीव हैं। जीव में जानने और देखने की शक्ति है। वह सुख चाहता है और दुःख से बचता है। जीव मरण के खोखलेपन को भी जानता है। जो जीव के शाश्वत रूप और अमृतत्त्व में

---

१. काश्यां काशमीरदेशे कुरुषु च मगधे कौशले कामरूपे।
कच्छे काले कलिंगे जनपदमहिते जांगलान्ते कुरादौ।
किष्किन्धे मल्लदेशे सुकृतिजनमनस्तोषदे धर्मवृष्टिं।
कुर्वन् शास्ता जिनेन्द्रो विहरति नियतं तं यजेऽहं त्रिकालम्॥
पांचाले केरले वाऽमृतपदमिहिरोमद्र चेदी दशार्ण—
वंगांगान्ध्रोलिकोशीनर मलयविदर्भेषु गौडे सुसह्ये आदि

प्रतिष्ठापाठ ६-६

विश्वास रखता है, उसे मरण का भय नहीं हो सकता। मरण क्या ? हाड़मांस का चोला बदलना है। आत्मा तो पवित्र है; पुद्गल का सम्पर्क अपवित्रता लाता है, वह संसार में रुलाता है। जीव चाहे तो सिद्ध बन जाय। तब वह ऊँचा उठता चला जाता है। प्रत्येक प्राणी ऐसा सुख चाहता है जो शाश्वत हो। वह सुख निर्वाण में हैं।[1] यह आत्मा ही परमात्मा बनती है।

महावीर स्वामी ने कहा कि 'धर्म ही उत्कृष्ट मंगल है। अहिंसा, संयम और तप यह धर्म है। जिसका मन सदा ऐसे धर्म में रत रहता है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।—

धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सयामणे॥

उन्होंने यज्ञ, स्नान आदि धार्मिक समझे जाने वाले अनुष्ठानों की भी शुद्धि की। उन अनुष्ठानों को आध्यात्मिक दृष्टि से नवीन रूप दिया। उन्होंने यज्ञ में अग्निहोत्र करने के स्थान पर तपरूप अग्नि में पापकर्म रूप ईंधन के द्वारा हवन करके कर्मक्षय के द्वारा निर्वाण-प्राप्ति का उपदेश दिया।

सार्वभौमिक सिद्धान्त

जहाँ भी महावीर स्वामी का समवशरण जाता था, धर्मचक्र आगे-आगे चलता था, सब ओर सुभिक्ष छा जाता था। पृथ्वी शस्य श्यामला हो उठती। देश में हिंसा का ताण्डव नृत्य बन्द हुआ और महावीर ने 'जिओ और जीने दो' का उपदेश दिया। उन्होंने कहा 'जिस बात से तुम्हें कष्ट पहुँचता है, उससे दूसरे का हृदय भी दुःखी होता है। जो तुम नहीं, चाहते, वह दूसरे के लिए भी मत करो।' महावीर स्वामी ने अहिंसा को परम धर्म घोषित किया। संक्षेप में उनके प्रमुख उपदेश ये थे—

१. भ० महावीर के कुछ सार्वभौमिक सिद्धान्त : डा० एम० हफीज डी० लिट्।

जिओ और जीने दो।[१]

किसी जीव को कष्ट मत पहुंचाओ।[२]

अहिंसा परम धर्म है।[3]

सर्वत्र सत्य का आचरण करो।

चोरी करना पाप है।

शीलव्रत का पालन करो।

आवश्यकता से अधिक परिग्रह (वस्तुएँ) एकत्र मत करो।

महावीर के पावन उपदेश से प्रभावित होकर सब मानव एक हुए, सबने उनकी पावन स्मृति सुरक्षित रखने का प्रयास किया।[४] वे तीर्थंकर थे—'तरति संसार महार्णवं येन निमित्तेन तत्तीर्थम् इति।'

अनेकान्त-स्याद्वाद

महावीर स्वामी विचारों में समन्वयवादी एवं उदारवादी थे। उनकी दार्शनिक विचारधारा अत्यधिक अहिंसामूलक थी। उन्होंने 'स्याद्वाद' और 'नयवाद' का सर्जन करके इस क्षेत्र में भी हिंसामूलक व्यवहार का वर्जन

१. तुम खुद जिओ और जीने दो जमाने में सभी को।

२. भ० महावीर ने तो एकबार यहाँ तक कहा था कि मेरी सेवा करने की अपेक्षा दीन दुःखियों की सेवा करना अधिक श्रेयस्कर है। मेरे सच्चे भक्त वे हैं जो मेरी आज्ञा का पालन करते हैं। मेरी आज्ञा है—

'प्राणिमात्र को सुख सुविधा एवं आराम पहुँचाना।'

—उपाध्याय अमरमुनि

३. हिंसा पाप का कारण है।—पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय ६५-६७.

४. 'जैन पूजा किसी व्यक्ति विशेष या ईश्वर की पूजा नहीं, वह आदर्श की पूजा है।' डा० एम० हफीज, एम० ए०, डी० लिट्

किया है[1]। अनेकान्तवाद का आचरण प्रत्येक जीव का कर्तव्य है। वर्द्धमान महावीर ने स्पष्ट शब्दों में कहा है—

जरा जाव न पीडेय वाही जाव न वट्ठइ।

जाविंदिया न हायंति ताव धम्मं समायरे॥

वस्तु को पूर्ण रूप से जानने वाला प्रमाण और अंश रूप से जानने वाला नय है। प्रमाण वाक्य और नय वाक्य की पहचान शब्दों से नहीं वरन् भावों से होती है। चैनसुखदास न्यायतीर्थ के शब्दों में—'स्याद्वाद सर्वांगीण-दृष्टिकोण है। उसमें सभी वादों की स्वीकृति है, पर उस स्वीकृति में आग्रह नहीं है। टुकड़ों में विभक्त सत्य को स्याद्वाद ही संकलित कर सकता है। स्याद्वाद सहानुभूतिमय है, इसलिए उसमें समन्वय की क्षमता है।[2] उसकी मौलिकता यही है कि वह पड़ौसी वादों को उदारता के साथ स्वीकार करता है किन्तु उनके आग्रह के अंश को छांटकर ही वह उन्हें अपना अंग बनाता है।[3]

१. गांधीजी को महावीर का अनेकान्तवाद बहुत प्रिय था। उनका मत है कि 'भगवान् महावीर का अनेकान्तवाद अभी भी यूरोप के आधुनिक से आधुनिक दर्शन को बहुत कुछ सिखा सकता है।'

२. स्याद्वादो विद्यते यत्र, पक्षपातो न विद्यते।
अहिंसायाः प्रधानत्वं, जैनधर्मः स उच्यते॥

३. पं० बलदेव उपाध्याय ने लिखा है—उनकी समता तो उस ज्ञान के मानसरोवर (अनेकान्त) से है जहां से भिन्न-भिन्न धार्मिक तथा दार्शनिक धाराएं निकलकर इस भारतभूमि को आप्यायित करती आयी हैं। इस धारा (स्याद्वाद) को अग्रसर करने में ही जैन धर्म का महत्व है।

धर्मचक्र

वर्धमान महावीर के समवशरण के आगे जो धर्म चक्र चलता था, उसके संबध में महाकवि असग ने वर्धमान चरित्र में लिखा है—'वर्धमान तीर्थंकर के आगे-आगे आकाश में चलता हुआ धर्मचक्र, जिसकी चमकती हुई किरणों की आभा क्षणभर के लिये समझदार मनुष्यों को भी यह शंका पैदा करती थीं कि यह द्वितीय सूर्य है।[1] महावीर स्वामी की दिव्य ध्वनि से त्रिभुवन के
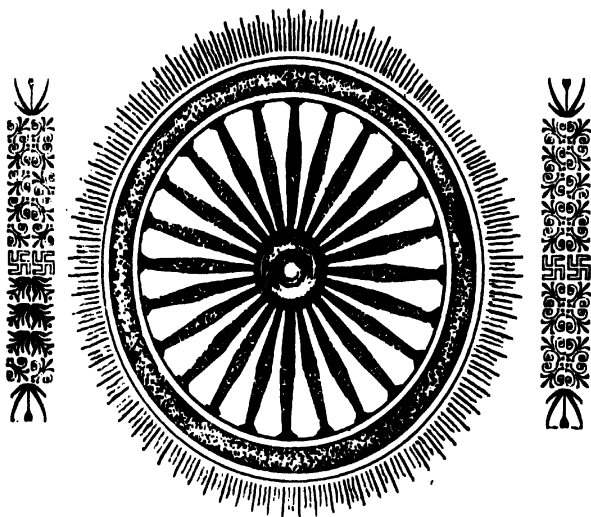
चौबीस आरे चौबीस तीर्थंकुरों के प्रतीक

१. अग्रेसरं व्योमनि धर्मचक्रं तस्य स्फुरद्भास्वर रश्मिचक्रम्।
द्वितीयतिग्मद्युतिबिंबशंका क्षणं बुधनामपि कुर्वदासीत् ॥

—वर्धमान चरित्र १८।८९

समस्त भव्य जीवों को हितकारी, प्रिय तथा स्पष्ट उपदेश प्राप्त होता है।[1] जिनसेन आचार्य ने महापुराण में दिव्यध्वनि के संबंध में लिखा है—

देवकृतो ध्वनिरित्यसदेतद् देवगुणस्य तथा विहतिः स्यात्।
साक्षर एव च वर्ण समूहान्नैव विनार्थगतिर्जगति स्यात् ॥२३।७३

अर्थात् कुछ लोग दिव्यध्वनि को देवकृत बताते हैं, किन्तु यह कथन वास्तविक नहीं है। ऐसा मानने से तो जिनेन्द्र भगवान् के अतिशय गुण का व्याघात होता है। वह दिव्यध्वनि अक्षरात्मक ही है, क्योंकि अक्षरों के समूह के बिना लोक में अर्थ का बोध संभव नहीं है। उनके उपदेशों में समस्त तात्विक बातों का विवेचन रहता था।

तीर्थंकर महावीर स्वामी ने २९ वर्ष, ५ महीने २० दिन तक (ऋषि, मुनि, यति और अनगार) चतुः साधु-संघ एवं श्रमण, श्रमणी, श्रावक और श्राविका सहित देश-विदेश में महान् धर्म प्रचार किया।[2]

पावा नगरी में 'महामणि शिलातले' निर्वाण

तीर्थंकर महावीर तीस वर्ष तक धर्म प्रभावना करते हुए मल्लों की राजधानी पावानगर पहुंचे। वर्तमान सठियांव गांव, जिला देवरिया ही तत्कालीन मल्लों की राजधानी पावानगर है। पावानगर में मल्लों की शुक्लसभा के समीप उद्यान में वे विराजमान हुए। उसका वर्णन इस प्रकार मिलता है—

१. 'तिहुवण-हिद-मधुर-विसद-वक्काण।'
'वह ध्वनि अनन्त अर्थों को गर्भ में रखने वाले बीज पदों से निर्मित शरीर वाली है।
—जयधवला, भाग १, पृ० १२६

२. वासाणूणत्तीसं पंच य मासे य बीस दिवसे य।
चउविह अणगारेहि य बारहदिणेहि (गणेहि) विहरित्ता॥
—जयधवला, ख पृ० ८१

'बहूनां सरसां मध्ये महामणि शिलातले मनोहर वनान्तरे'

महामणि शिलातले (मण्डप के नीचे) राज्यसभा के उद्यान में उन्होंने ४८ घन्टे योग निरोध करके कार्तिक कृष्णा ३० मंगलवार १५ अक्टूबर ५२७ ई० पू० को ७१ वर्ष ३ माह २५ दिन १२ घन्टे की अवस्था में निर्माण प्राप्त किया।[1] उस समय वहाँ हस्तिपाल और १८ गणराज्यों के प्रमुख उपस्थित थे।[2] ये १८ गणराजा काशी-कौशल के थे। इन सभी ने मिलकर महावीर के परिनिर्वाण के उपलक्ष में दीपोत्सव मनाया, जो आज भी देश में दीपावलि के रूप में मनाया जाता है। महावीर स्वामी का निर्वाण शुक्ल संवत्सर, स्वाति नक्षत्र में हुआ था।

पावानगर

प्रसिद्ध विद्वान् महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने मल्लों की पावा में महावीर का परिनिर्वाण माना है। प्राचीन भारतीय इतिहास के मर्मज्ञ विद्वान् उपकुलपति डॉ० राजबली पाण्डेय का मत है कि 'वास्तविक पावा सठियाँव-फाजिलनगर के खण्डहरों में अब भी सोयी पड़ी है। वर्तमान पावापुरी में प्राचीन नगर अथवा धर्मस्थान के कोई अवशेष नहीं मिलते हैं। वर्तमान मन्दिर आधुनिक हैं। यह बात इस स्थान की प्राचीनता में सन्देह उत्पन्न करती है। वर्तमान पावा संभवतः चौदहवीं शताब्दी में स्थानान्तरित हुई।' डा० योगेन्द्र मिश्र ने भी सठियाँव-पावा को महावीर स्वामी का वास्तविक निर्वाण-स्थल माना है।[3] पुराणों में पावापुर का वर्णन इस प्रकार है—

१. 'एसो वीर जिणिद णिव्वागद दिवणादो जाव सगकालस्स आदी होदि तावदियकालो। कुदो? ६०५ वर्ष ५ माह शक संवत् पूर्व। एदम्हि काले सगणरिंद कालम्मि पक्खित्ते वड्ढमाण जिण णिव्वुद कालागम णादो।'— —छक्खण्डागमे, वेयणाखण्ड ४।१।४४ पृ० १३२

२. 'कल्पसूत्र' के अनुसार महावीर के निर्वाण को नौ मल्लों और नौ लिच्छवि गणराज्यों के प्रमुखों ने दीपोत्सव के रूप में मनाया। उनका कहना था कि ज्ञान का प्रकाश लुप्त हो गया है, उसकी स्मृति में हम दीपावलि के द्वारा प्रकाश का उत्सव मना रहे हैं।

३. An early History of Vaisali

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्रीवर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा ॥
पावापुर वरद बहिर्भू बिलसित विततवनके सुरुचितसरासां ।
पावन वनके जिनेन्द्रं श्रीवीरं मारविजयि विजयंगेयदं ॥'

— आचण्ण कवि, वर्धमान पुराण १६।६६

वर्तमान युगबोध ओर महावीर

वर्तमानकाल में युद्ध की विभीषिकाओं मे संत्रस्त विश्व-मानव को यदि कहीं स्थायी त्राण मिल सकता है, तो वह महावीर की अहिंसा में। वह अहिंसा का कोरा उपदेश नहीं था वरन् जीवन में पूर्ण रूप से उतारकर, उसकी सच्ची अनुभूति करके और उसके द्वारा अपनी आत्मा को परमात्मा बना लेने वाले तीर्थङ्कर का उद्घोष था। उनकी दिव्य-ध्वनि जब खिरी तो जीवमात्र को त्राण मिला। तीर्थङ्कर महावीर की वाणी आज भी गांधीजी के आचरण में स्नात होकर विश्व के मानव को बोध प्रदान कर रही है। कवियों के हृदय में आज भी महावीर के सिद्धान्त भाव तरङ्गें उत्पन्न कर देते हैं ओर वे युग-मानव के त्राण के लिए महावीर के सन्देश की जयजयकार करते हैं।[1] आज भी महावीर के उपदेश मानव को त्राण दिला सकते हैं। शिवसिंह चौहान के शब्दों में—

हे पूर्ण पुरातन, अनघ अभय ।
हे दिव्य, अनामय चिर-अशेष ।
तुम अभिनव, अभिनव गति महान् ।
अभिनव अभिनन्दन, नय-निवेश ॥

'निस्सन्देह भगवान् महावीर एक महापुरुष थे। उनके समकालीन मानवों पर उनके मानसिक एवं आध्यात्मिक उपदेशों का गम्भीर प्रभाव पड़ा था।

१. आज हिंसा दानवों के केन्द्र में भीषण प्रलय हो।
विश्व के हित 'वीर' के सन्देश की जग में विजय हो ॥

—श्री कल्याणकुमार जैन

सत्य-अहिंसा के पथदर्शक, जय जन-जीवन के भगवान् ।
आज वन्दना के स्वर लेकर, करें तुम्हारा हम आह्वान ॥

—कविवर मुकुल

अपने समय के सभी ज्वलन्त प्रश्नों पर उन्होंने प्रबल और गंभीर विचार करके ठीक समाधान किया था। उनके चहुं ओर की परिस्थिति को स्पष्ट विश्लेषित और निराकृत करने के लिये उस समय उनकी बड़ी आवश्यकता थी। अपने उपदेश में उन्होंने इहलोक और परलोक विषयक समस्याओं को स्पष्ट रीति से परिष्कृत किया। सांसारिक जीवन से प्राप्त राजबुद्धि और अपने अति ऊँचे ज्ञान के द्वारा वह सभी को शुद्ध मार्ग दर्शाते थे।'[१] बा० कामताप्रसाद जैन के शब्दों में 'महावीर अहिंसक संस्कृति के शोधक, उन्नायक और जैन धर्म के पुनरोद्धारक हुये।' श्री अगरचन्द नाहटा के शब्दों में—'अपरिग्रह एवं अनेकान्त ही भगवान् महावीर की महान् देन है। ममत्त्व मूर्च्छा ही परिग्रह है। अशांति का प्रधान कारण परिग्रह ही है। जीवन की आवश्यकताओं को कम करना और वस्तुओं को आवश्यकतानुसार सीमित रखना चाहिए।' तीर्थङ्कर के उपदेश केवल सीमित पण्डित वर्ग के लिए ही नहीं थे, वरन् आबाल वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी के लिए थे। उन्होंने आत्मा के हितकर, अहितकर, संसार भ्रमण, कर्मबन्धन, कर्ममोचन, धर्म-अधर्म, ग्रहस्थधर्म, मुनिधर्म, जीव परिणमन, अजीवपरिणमन आदि की विशद व्याख्या की थी।

तीर्थङ्कर वर्द्धमान-महावीर अहिंसा के अवतार थे।[२] वे प्रेम के महावीर थे।[3] उनकी शिक्षाओं में विजयी आत्मा का का विजय ज्ञान था।[४] उन्होंने

---

१. जर्मन विद्वान् डा. हेल्मुथ फान ग्लाजेनाप्प

२. 'भ० महावीर अहिंसा के अवतार थे। उनकी पवित्रता ने संसार को जीत लिया था। महावीर स्वामी का नाम इस समय यदि किसी भी सिद्धान्त के लिए पूजा जाता हो, तो वह अहिंसा है। प्रत्येक धर्म की उच्चता इसी बात में है कि उस धर्म में अहिंसा तत्त्व की प्रधानता हो। अहिंसा-तत्त्व को यदि किसी ने अधिक से अधिक विकसित किया हो, तो वे महावीर स्वामी थे'—**महात्मा गांधी।**

३. 'वे महावीर अर्थात् महान् विजयी—इतिहास के सच्चे महापुरुष हैं। वे उद्धतता और हिंसा के नहीं, किन्तु निरभिमानता और प्रेम के महावीर थे।

—साधु टी. एल. बास्वानी

४. 'महावीरजी की शिक्षायें ऐसी प्रतीत होती हैं, मानो विजयी आत्मा का विजयज्ञान हो, जिसने अन्ततः इसी लोक में स्वाधीनता और जीवन पा लिया हो।'

—इटली के विद्वान **डॉ. अल्बर्टो पाग्गी, जिनोवा।**

संसार सागर में डूबते हुए मानवों का उद्धार किया। उन्होंने जीव को उद्धार का निश्चित मार्ग बताया। वे हमारे चिर अतीत के धर्मवीर हैं।[1] वे सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, तप और परिग्रह रूपी महान् आदर्शों के प्रतीक हैं।[2] वह प्रसिद्ध तीर्थङ्कर वर्द्धमान महावीर ही वास्तविक महावीर हैं, जो राज्य को त्यागकर कुमारावस्था में प्रव्रजित हुए और जिन्होंने काम, क्रोध रूप महाशत्रु पक्ष का निर्घातन किया।[3]

उपसंहार —

विश्व के इतिहास में ईसा पूर्व छठी शताब्दी का काल तीर्थंकर महावीर का जन्मकाल होने के कारण विशेष महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने अपने जीवन-दर्शन एवं चिन्तन से आत्मोद्धार का मार्ग प्रशस्त किया। उनके तत्वज्ञान के अद्भुत प्रकाश एवं पवित्र अनुकरणीय आचरण से मानव को त्राण मिला। उन्होंने अपने युग की विचारधारा को मोड़ दिया। अपने अन्तरंग में बैठे कषायरूपी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके ही हम मोक्ष-मार्ग पर आगे बढ़ सकते हैं। त्रिरत्न ही सांसारिक सन्ताप का शोषक मोक्ष-मार्ग है। महावीर की वाणी के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं।

१. चिर अतीत के धर्म्म-वीर, उतरो नूतन बन।
पुनर्दर्शसे मुखरित हो अभिशापित जन मन॥

— शिवसिंह चौहान

२. सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य तप और अपरिग्रह रूपी महान् आदर्शों के प्रतीक भगवान् महावीर हैं। इन महाव्रतों की अखण्ड साधना से उन्होंने जीवन का बुद्धिगम्य मार्ग निर्धारित किया था और भौतिक शरीर के प्रलोभनों से ऊपर उठकर अध्यात्मभावों की शाश्वत विजय स्थापित की थी। मन, वाणी और कर्म की साधना उच्च अनन्त जीवन के लिये कितनी दूर तक संभव है, इसका उदाहरण तीर्थङ्कर महावीर का जीवन है! इस गम्भीर प्रज्ञा के कारण आगमों में महावीर को दीर्घप्रज्ञ कहा गया है। ऐसे तीर्थंकर का चरित्र धन्य है।

—वासुदेवशरण अग्रवाल

३. सो णाम महावीरो जो रज्जं पयहिऊण पव्वइयो।
काम-कोह-महासत्तुपक्ख निग्घायणं कुणई॥

—अनुयोगद्वार

महावीर-वाणी

१. **'अप्पाणमेव जुज्झाहि किं ते जुज्झेण बज्झओ ।**
अप्पणामेवमप्पाणं जइत्ता सुहमेहए ॥'

∧ 'हे प्राणी ! तू बाहरी शत्रुओं से क्यों जूझता है, यदि युद्ध ही करना है तो अपने भीतर बैठे हुए शत्रुओं से कर। यदि तूने अपने भीतर बैठे शत्रुओं पर विजय प्राप्त करली तो तुझे सच्चा सुख प्राप्त हो जावेगा ।'

२. **मणु मिलयउं परमेसरइ परमेसरु वि मणस्सु ।**
बीहि वि समरसि हवाहं पुज्ज चडावउं कस्स ॥

∧ मन परमेश्वर से मिल गया और परमेश्वर मन से। दोनों का समरसीभाव हो गया, फिर पूजा चढ़ाऊँ तो किसे चढ़ाऊँ।

—परमात्मप्रकाश, जोइन्दु

३. **गइलक्खणो उ धम्मो, अहम्मो ठाणलक्खणो ।**

∧ गतिशीलता धर्म का लक्षण है, गतिहीनता (जड़ता) अधर्म का लक्षण है ।

४. **अज्झत्थ सव्वओ सव्वं, दिस्स पाणे पियायए ।**
नहणे पाणिणो पाणे भयवेराओ उवरए ॥

∧ सब ओर से आने वाले सब सुख-दुःख का मूल अपने ही भीतर है और सभी प्राणियों को प्राण प्रिय है, यह जानकर भय और द्वेष से विमुक्त मनुष्य किसी के प्राणों का हनन नहीं करता ।

५. **नाणस्स सव्वस्स य पगासणाय अन्नाणमोहस्स विवज्जणाए ।**
रागस्स दोसस्स य संखएणं एगंतसोक्खं समुवेइ मोक्खं ॥

∧ समस्त ज्ञान प्रकाशमय (निर्मल) हो जाए, अज्ञान-मोह का त्याग हो जाए, राग एवं द्वेष का संक्षय हो जाए, तो सुख ही सुख है ।

६. **अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली।**
अप्पा कामदुघा धेणू, अप्पा मे नंदनं वणं॥

∧ आत्मा ही वैतरणी नदी है, आत्मा ही कूटशाल्मली वृक्ष है, आत्मा ही कामधेनु है, आत्मा ही मेरा नंदनवन है।

७. **अप्पा कत्ता विकत्ता य दुक्खाण य सुहाणय।**
अप्पा मित्तममित्तं य दुप्पट्ठिय सुपट्ठियो॥

∧ आत्मा ही अपने सब दुःख-सुख का बनाने-बिगाड़ने वाला है। सुपथगामी आत्मा मित्र है, विपथगामी आत्मा अपना शत्रु है।

महावीर-वन्दना

देवाधि देव ! परमेश्वर ! वीतराग ! सर्वज्ञ ! तीर्थंकर ! सिद्ध ! महानुभाव। त्रैलोक्यनाथ ! जिनपुंगव ! वर्धमान ! स्वामिन ! गतोस्मि शरणं चरणद्वयं ते॥

∧ 'हे देवाधि देव, हे परमेश्वर, हे वीतराग, हे सर्वज्ञ, हे तीर्थङ्कर, हे सिद्ध, हे त्रैलोक्यनाथ, जिनश्रेष्ठ वर्धमान स्वामी मैं आपके उभय चरण की शरण में प्राप्त हुआ हूँ, मेरा उद्धार करो।'

जयइ जगजीव जोणी, विहाण ओ जगगुरु जगाणन्दो।
जगनाहो जगबन्धु, जगइ जगपिया महा भयवं॥१॥

जयइ सुयाणयभवो, तित्थयराणं अपच्छिमो जयइ।
जयइ गुरुलोयाणं, जयइ महप्पा महावीरो॥२॥

—नन्दीसूत्र

∧ जगत् के सम्पूर्ण चराचर जीवों के जानने वाले भगवान् महावीर, जो जगत् के गुरु, नाथ, हितैषी और आनन्द रूप हैं, उन जगत् पितामह की जय हो, जय हो। द्वादशाङ्ग सूत्रों के जन्मदाता, तीर्थङ्करों में अन्तिम तीर्थङ्कर, समग्र लोक के गुरु ऐसे महान् आत्मा वाले भगवान् महावीर की जय हो ! जय हो !!

● ●

परिशिष्ट १

तीर्थङ्कर वर्धमान की जन्म कुण्डली

जन्म— चैत्र सुदी १३, सोमवार ई० पू० ५९८

नक्षत्र—उत्तरा फाल्गुनि

संवत्सर—सिद्धार्थी

राशि—कन्या

समय—निशा का अन्त

महादशा—बृहस्पति

दशा—शनि

अन्तर्दशा – बुध

जन्मस्थान - वैशाली, कुण्डलपुर (क्षत्रिय कुण्डग्राम)[1]

पिता—सिद्धार्थ ; माता—त्रिशला प्रियकारिणी

नाना—चेटक ; नानी—सुभद्रा

कुल - नाथकुल

जाति—लिच्छिवि

वंश—इक्ष्वाकु

गोत्र—काश्यप

---

१. वर्द्धमान महावीर के जन्म-स्थान के अनेक ग्रन्थों में विभिन्न नाम मिलते हैं। वे इस प्रकार हैं– कुण्डग्राम (काव्य शिक्षा), कुण्डग्गाम (आवश्यक निर्युक्ति), क्षत्रिय कुण्डग्राम, कुण्डलपुर, कुण्डलीपुर-चामुण्डराय (वर्द्धमानपुराण), कुण्डलपुर (आचण्ण कवि कृत वर्धमान पुराण), सिरिकुण्डग्राम (नेमिचन्द्र सूरिकृत महावीरचरित), कुण्डला (आचार्य सकलकीर्ति), वैशाली नामकुण्डे (वैशाली में उत्खनन से प्राप्त मुहर पर अंकित)।

जन्म पत्रिका[1]
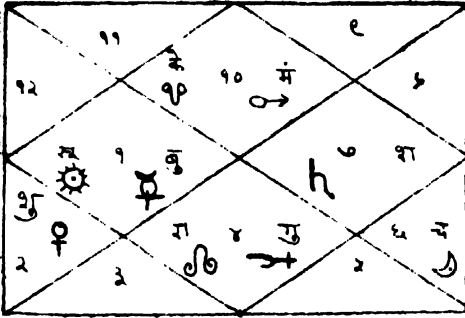
संवत्सर : सिद्धार्थी[2]

निर्वाण : भस्म राशि

---

१. चैत्र सितपक्ष फाल्गुनि शशांक योगे दिने त्रयोदश्याम् ।
जज्ञे सर्वोच्चस्थेषु गृहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ।।

२. 'वेदशास्त्र प्रभावज्ञः सिद्धिचितश्च कोमलः ।
सुकुमारो नृपैः पूज्यः कविः सिद्धार्थिनो नरः ।।'

—मानसागरी पद्धति, ५२

१. दृष्टे ग्रहैरथ निजोत्त्वगतैः समग्रैर्लग्ने यथा पतितकालमसूत राज्ञी ।
चैत्रे जिनं सिततृतीयजया निशान्ते सोमान्हि चन्द्रमसि चोत्तर फाल्गुनिस्थे ।।

—असग महाकवि, वर्द्धमान चरित्र, १७।५८

—'उच्च ग्रहों द्वारा लग्न के दृष्टिगोचर होने पर, चैत्र शुक्ला १३ सोमवार को उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र पर चन्द्र की स्थिति होने पर निशा के अन्तिम भाग में रानी त्रिशला ने तीर्थङ्कर महावीर को जन्म दिया ।'—

विशद काल-निर्णय

१—कुमार काल	२६ वर्ष	७ माह	१२ दिन
२—तप काल	१२ वर्ष	५ माह	१५ दिन
३—देशना काल	२६ वर्ष	५ माह	२० दिन
४—योगनिरोध	—	—	२ दिन
	७० वर्ष	६ माह	१८ दिन
५—गर्भकाल	—	६ माह	७ दिन १२ घंटे
	७१ वर्ष	३ माह	२४ दिन १२ घंटे

स्थूल काल-निर्णय

आचार्य पूज्यपाद ने निर्वाण भक्ति में स्थूल रूप से महावीर का कुमार काल ३० वर्ष, तप काल १२ वर्ष और देशना काल ३० वर्ष माना है। इसी प्रकार महावीर की आयु उनकी स्थूल गणना से ७२ वर्ष है।–६

---

१. अट्ठावीसं सत्तयमासे दिवसे य वारसयं ॥३०॥

—जय ध० भाग १, पृ. ७८.

२. गमइय छदुमत्थत्तं वारसवासाणि पंचमासेय।
पण्णरसाणि दिणाणि य तिरयणसुद्धो महावीरो ॥३२॥

३ वासाणूणत्तीसं पंच य मासे य वीसदिवसे य ॥३५॥
—जय ध., भाग १, पृ. ८१

४. षष्ठेन निष्ठित कृतिर्जिन वर्द्धमानः ॥२६॥ –(निर्वाण भक्ति)

—संस्कृत टीका–षष्ठेन दिन द्वयेन परिसंख्याते आयुषिसति।

५. अच्छित्ता णवमासे अट्ठयदिवसे चइत्त-सियपक्खे।

—जय. ध., भाग १, पृ. ७८

६. मुक्तवा कुमारकाले त्रिशद्वर्षाण्यनंतगुणराशिः। नि. भ. ७.
(क) उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादश वर्षाण्यभरपूज्यः।१०।
(ख) देशयमानो व्यहरंस्त्रिशद्वर्षाव्यथ जिनेन्द्रः।१५।

—आचार्य पूज्यपाद निर्वाण भक्ति

(ग) 'द्विसप्ततिः स्यात्खलु वर्धमाने॥'

— वरांग चरित्र, सप्तति, ५५ श्लोक

(घ) वर्धमान महावीर की परम आयु केवल ७२ वर्ष थी।

परिशिष्ट २

तीर्थङ्कर वर्द्धमान के पंच कल्याणकों की तिथियाँ

कल्याणक	संवत्सर	मास	नक्षत्र	वार	ई० सन्
गर्भ	काल	आषाढ़ शुक्ल ६	उत्तरहस्ता	शुक्रवार	१७ जून ५९९ ई०पू०
जन्म	सिद्धार्थी	चैत्र शुक्ल १३	उत्तराफाल्गुनि	सोमवार	२७ मार्च ५९८ ई०पू०
दीक्षा (तप)	सर्वधारी	मगसिर कृष्ण १०	उत्तरहस्ता	सोमवार	२९ दिसम्बर ५६९ ई०पू०
केवल (ज्ञान)	शार्वरी	वैशाख शुक्ल १०	उत्तरहस्ता	रविवार	२६ अप्रेल ५५७ ई०पू०
निर्वाण (मोक्ष)	शुक्ल	कार्तिक कृष्ण ३०	स्वाति	मंगलवार	१५ अक्टूबर ५२७ ई०पू०

परिनिर्वाण महोत्सव के समय प्रयुक्त किये जाने वाले कुछ जयघोष

गर्भ घर-घर में महावीर की कथा अन्यथा सब व्यथा

जन्म विशाल हृदय ही वैशाली

दीक्षा ज्ञान ही ज्ञातृखण्डवन

केवलज्ञान ऋजु भाव ही ऋजुकूला तट

निर्वाण निर्मल मन ही पावा तीर्थ

कुण्डलपुर ही मोक्षमण्डल

दुःख से मुक्ति ही अतिमुक्तक स्थान

घर-घर में ज्ञानदीप जले

महावीर-वन्दन

(पादाकुलक छन्द)

सन्मति जिनपं सरसिजवदनं । संजनिताखिल कर्मकमथनं ।
पद्मसरोवरमध्यगजेन्द्रं । पावापुरि महावीरजिनेन्द्रं ॥१॥
वीरभवोदधि पारोत्तारं । मुक्ति श्रीवधू नगरविहारं ॥पद्म०॥२॥
द्विद्वादशकं तीर्थपवित्रं । जन्माभिपकृत निर्मलगात्रं ॥पद्म०॥३॥
वर्धमाननामाख्यविशालं । मानमानलक्षणदशतालम् ॥पद्म॥४॥
शत्रुविमथन विकट भटवीरं । इष्टैश्वर्यधुरीकृतदूरं ॥पद्म०॥५॥
कुण्डलपुर सिद्धार्थभूपालं । तत्पत्नी प्रियकारिणि बालं ॥पद्म०॥६॥
तत्कुलनलिनविकाशितहंसं । घातपुरोघातिक विध्वसं ॥पद्म०॥७॥
ज्ञानदिवाकरलोकालोकं । निर्जितकर्मारातिविशोकं ॥पद्म०॥८॥
बालत्वे संयममुपालित । मोहमहानलमथनविनीतं ॥पद्म०॥९॥

—आशाधर सूरि

श्री महावीराष्टकस्तोत्रम्

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसन्तोऽन्तरहितः ।
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥१॥

अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं
जनान् कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥२॥

नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजाल-जटिलं
लसत्पादाम्भोजद्वयमिह यदीयं तनुभृताम्।
भवज्वालाशान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥३॥

यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह
क्षणादासीत् स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ।
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥४॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो
विचित्रात्माप्येको नृपतिवर सिद्धार्थतनयः ।
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥५॥

यदीया वाग्गंगा विविधनय कल्लोलविमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनता या स्नपयति
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥६॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ।
स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनोः
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥७॥

महामोहातंकप्रशमनपराकस्मिकभिषङ्
निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमामंगलकर ।
शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥८॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या 'भागेन्दुना' कृतम् ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥९॥

● ●

आरती श्री वर्द्धमान जिन की

(कविवर द्यानतराय)

करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान-थान को ॥टेक॥

राग विना सब जग जन तारे, द्वेष विना सब करम विदारे।
करौं आरती वर्द्धमान की पावापुर निरवान-थान की ॥

शील-धुरन्धर शिव-तिय-भोगी, मन,वच-कायन कहिये योगी।
करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान-थान की ॥

रतनत्रय-निधि परिगह-हारी, ज्ञान-सुधा-भोजन-व्रतधारी।
करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान-थान की ॥

लोक अलोक व्याप निजमाहीं सुखमय इन्द्रिय-सुख-दुख नाही।
करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवार-थान की ॥

पंचककल्याणक-पूज्य विरागी, विमल दिगम्बर अम्बर-त्यागी।
करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान-थान की ॥

गुन-मनि-भूषन-भूषित स्वामी, जगत-उदास जगन्तर स्वामी।
करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान-थान की ॥

कहै कहां लौं तुम सब जानौ, 'द्यानत' की अभिलाष प्रमानौं।
करौं आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान-थान की ॥

● ●

वीर-निर्वाण भारती के प्रकाशन

१. **जैन शासन का ध्वज** : डॉ० जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल
मूल्य १ रु०

२. **भारतीय संस्कृति और परम्परा** : डॉ० हरीन्द्रभूषण जैन
मूल्य ७५ पैसे।

३. **ऐतिहासिक महापुरुष** : तीर्थंकर वर्धमान महावीर
: डॉ० जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल
मूल्य १.५० पैसा

४. Fundamentals of Jainism : Barrister C. R. Jain
(New Edition)

पुस्तक प्रकाशन का पता
राजेन्द्रकुमार जैन
६६, तीरगरान स्ट्रीट
मेरठ शहर–२